उपसंहारः

समकालीन कहानी : परिवर्तित स्त्री-पुरूष सम्बन्ध

समकालीन कहानी विगत पाँच दशकों से चर्चा के केन्द्र में है। समकालीन और समकालीनता से तात्पर्य अपने युगबोध, ऐतिहासिक बोध, तात्कालिक जीवन बोध और समसामयिक राजनैतिक-सांस्कृतिक बोध से सम्पृक्त होना है। यह सच है कि एक ही कालखण्ड, समय, और युगबोध में विभिन्न प्रवृत्तियों, विचारों और दार्शनिक भावबोध के रचनाकार सक्रिय रहते हैं। जो विभिन्न धाराओं में लिखते हैं। कोई रचनाकार आन्तरिक मनोवृत्तियों का सजग चितेरा होता है तो कोई कथाकार बाह्य परिवेश और युगबोध विशेष को महत्व देता है। निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव जहाँ आन्तरिक अनुभूतियों के रचनाकार हैं तो उसी दौर के नये कहानीकारों में भीष्म साहनी, मोहन राकेश,और कमलेश्वर मध्यवर्गीय संवेदनाओं को प्रतिबद्ध भाव से रूपायित करते हैं।

समकालीन कहानी के विकास में विभिन्न कहानी-आन्दोलनों, प्रवृत्तियों और रूझानों की चर्चा आवश्यक है। कारण विगत पचास वर्षो में स्त्री-पुरूष सम्बन्धों में लोमहर्षक और युगान्तरकारी परिवर्तन आये हैं। अतः विभिन्न कहानी आन्दोलनों के अन्तर्गत उनकी चर्चा और विश्लेषण सम्बन्धी कार्य एक दुःसाहस भरा कार्य माना जायेगा। समकालीन कहानी के स्वरूप और क्षेत्र के अन्तर्गत पूर्वपीठिका के रूप में नयी कहानी आन्दोलन और योगदान की चर्चा अवश्यम्भावी है। समकालीन कहानी के क्षेत्र में एक ओर

समसामयिकता, तात्कालिकता और युगबोध के जुड़ाव की भावना है तो दूसरी ओर आंचलिक, ग्रामीण बोध के समानांतर महानगरीय जनजीवन की विषमता और त्रासदी से भी दो-चार होना है।

वास्तव में समकालीनता केवल समसामयिक बोध से सम्पृक्त होना ही नहीं है बल्कि समकालीनता एक मूल्य दृष्टि है, विचार दृष्टि है, जिसमें या तो अपने देश-काल, इतिहास बोध से तटस्थता अपनाकर प्रेम अध्याम, प्रकृति सम्बन्धी सुन्दरता के शाश्वत बोध की कल्पना की जाये। जो वस्तुतः समकालीनता के यथार्थबोध एवं अन्तर्विरोधों से अलग होकर अज्ञेय, निर्मल वर्मा, धर्मवीर भारती व अन्य कलावादी चिन्तकों का भाववादी-अध्यात्मवादी भाव है। वास्तव में समकालीनता का सही तात्पर्य अपने समसामयिक इतिहासबोध, वैश्विक विजन और राजनैतिक संक्रमण में सामाजिक, पारिवारिक मूल्यों से जुड़ाव और जन संघर्षो चेतना की प्रतिबद्धता का है। (1) जिसका प्रतिबिम्ब हम मोहन राकेश (मलबे का मालिक), भीष्म साहनी (चीफ की दावत), राजेन्द्र यादव (छोटे-छोटे ताजमहल), मन्नू भण्डारी (यही सच है) आदि रचनाकारों के पास साक्ष्य रूप में पाते हैं। कहना न होगा कमलेश्वर, रेणु और शानी ने अपनी प्रारम्भिक रचनाओं में ग्रामीण संवेदनाओं और रागात्मक बोध को अपनी रचनाओं में प्राथमिकता दी है।

यशपाल, नागार्जुन, मार्कण्डेय आदि ने नयी कहानी के प्रारम्भिक दौर में युगीन सन्दर्भो और वैचारिक परिवर्तन को महत्व दिया है यह उनकी अपनी राजनैतिक और सांस्कृतिक अवधारणाओं को महत्व दिया जाना है। कहना न होगा कि कहानी न केवल वैचारिक फ्लैश होती है, न केवल आत्मगत भावों की अभिव्यक्ति है और न केवल किसी तटस्था गवाह का हलफनामा है। क्योंकि 'कहानी अब किसी घटना का वर्णन मात्र नहीं है, उसकी संरचना की आन्तरिक प्रकृति केवल 'मनोरंजन' और 'कौतूहल' या 'तुष्टि वादी' नहीं है, और न 'जीवन की यथार्थताओं का संघर्ष' या 'जीवन के स्वाभाविक चित्रण' तक ही वह सीमित है। वह चित्रण ही नहीं करती है बल्कि एक नये कला संसार की सर्जना भी करती है क्योंकि अन्य कलारूपों की तरह ही वह मनुष्य की जीवन सिसृक्षा का ही एक प्रकार है। (2)

विवेच्य शोध प्रबन्ध में समकालीन कहानी के विभिन्न आन्दोलनों, प्रवृत्तियों प्रमुख रचनाकारों और रचनाओं की चर्चा की गयी है। स्त्री-पुरूष सम्बन्धों के बीच जो अभूतपूर्व बदलाव विगत पाँच दशकों में आये हैं उन्हें संयुक्त परिवार तथा नारी जीवन की अस्मिता स्वतन्त्रता में देखने का प्रयास किया गया है। वर्तमान दौर में औद्योगिक विकास तथा परिवर्तित जीवन शैली में अलगाव, ऊब, तनाव एवं परिवेश विडम्बनाएँ भी प्रमुख समस्याएँ बनकर उभरी है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध के प्रथम अध्याय **'समकालीन कहानी : स्वरूप, क्षेत्र एवं युगीन सन्दर्भ'** का विवेचन किया गया है। साथ ही जीवन के विभिन्न क्षेत्रों-आंचलिक, ग्रामीण, पहाड़ी एवं महानगरीय के रेखांकन में उनकी

विशिष्टता दर्शायी गयी हैं। विभिन्न बदलते हुए सन्दर्भो को भी रेखांकित किया गया है।

'समकालीन कहानी का विकास : विभिन्न आन्दोलन एवं प्रवृत्तियाँ' नामक द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत नयी कहानी और प्रगतिशील कहानी की चर्चा की गयी है। साथ ही विभिन्न कहानी आन्दोलन-अकहानी, समांतर कहानी, वामपंथी और जनवादी कहानी आन्दोलन और इनकी प्रमुख प्रवृत्तियों की विवेचना की गयी है। अक्सर हिन्दी कहानियों की आलोचना में ग्रामीण-आंचलिक कहानियों और महानगरीय बोध की चर्चा की जाती है, जो विभिन्न कहानी आन्दोलन की सीमा में विश्लेषित नहीं होती है। संकेत यहाँ रेणु, मार्कण्डेय, शिवप्रसाद सिंह, कमलेश्वर, शिवमूर्ति और मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों के बरक्स मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, कृष्ण बलदेव वैद्य, मन्नू भण्डारी और उषा प्रियंवदा आदि की रचनाओं के सन्दर्भ में है। बेशक ग्रामीण जीवन के रेखांकन हेतु मार्कण्डेय की ग्राम्य जीवन की कहानियाँ और कमलेश्वर की 'अपनी बस्ती' की कहानियाँ उनके उदाहरण में रखी जा सकती हैं। यहाँ लेखक की अपार संवेदनशीलता तथा बदलते हुए जीवन के भीतर असत पक्षों तथा ह्रसोन्मुख अंधशक्तियों के प्रति उनका कटू व्यंग्य तथा विद्रोह, इस प्रसंग के बड़े महत्वपूर्ण तत्व है।

मार्कण्डेय का 'भू-दान', 'दाना भूसा', 'आदर्श कुक्कुट गृह'-कमलेश्वर की 'नीली झील', 'बदनाम वस्ती', 'सलमा'। [3] तथा फणीश्वरनाथ रेणु की 'अच्छे आदमी' [4] और 'तीसरी कसम' कहानी इस नए क्षेत्र की उत्कृष्ट कहानियाँ हैं। यहाँ एक ओर महत्वपूर्ण तत्व है इन कहानियों में परम वैविध्य। कहीं भी, किसी भी स्तर से एकरसता और दुर्बोधता का नामोनिशान नहीं। ऋजु कौशल और सहजता ही इनकी शक्ति है तथा एक निश्चित अभिप्राय है संघर्षशील, बदलते हुए जीवन के भीतर युद्धरत शक्तियों से डटकर जूझने और सीधे चुनौती देने का उद्देश्य।

'समकालीन कहानी : प्रमुख रचनाकार और रचनाएँ' नामक तृतीय अध्याय के अन्तर्गत 'नयी कहानी बनाम समकालीन कहानी' की चर्चा की गयी है। सुधी विद्वान जानते है कि 'नयी कहानी आन्दोलन के रचनाकार ही कालान्तर में समकालीन कहानी के पुरस्कर्ता माने गये हैं। हालाँकि दावा राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, शानी और मन्नू भण्डारी आदि को अधिक दिया गया है। हमारा विचार है कि नई कहानियों के श्रेष्ठ उदाहरण में आने वाली ये कहानियाँ-कृष्णा सोबती की 'बादलों के घेरे', रांघेय राघव की 'गदल', अमरकान्त की 'दोपहर का भोजन', मोहन राकेश की 'मिसपाल', 'आर्द्रा', मार्कण्डेय की 'उत्तराधिकारी' राजेन्द्र यादव की 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', निर्मल वर्मा की 'परिन्दे', कमलेश्वर की 'राजा निरबंसिया', धर्मवीर भारती की 'गुलकी बन्नो', मन्नू भण्डारी की 'यही सच है', फणीश्वर नाथ रेणु की की 'मारे गये गुलफाम', उषा प्रियंवदा की 'जिन्दगी और गुलाब' और 'वापसी', शेखर जोशी की 'कोसी का घटवार'

आदि जहाँ एक ओर वैचारिक स्तर पर नई हैं,वहाँ दूसरी ओर ये शिल्प के स्तर पर भी नयी परम्परा के रेखांकन में सक्षम हैं।

'अकहानी आन्दोलन' व्यवस्था के प्रति विक्षोभ, गुस्सा और प्रतिकार व्यक्त करता है। कहानी आन्दोलन में स्त्री-पुरूष प्रसंगों का बैलोस चित्रण किया गया है। महेन्द्र भल्ला, रमेश बक्षी, इब्राहिम शरीफ, गंगाप्रसाद विमल, निरूपमा सेवती आदि ने दिल्ली बम्बई और कलकत्ता के संघर्षपूर्ण जीवन में नारी की स्थिति को विभिन्न कथा-प्रसंगो से दर्शाया है। सुधा आरोड़ा दीप्ति खण्डेलवाल और से.रा.यात्री आदि ने समांतर कहानी आन्दोलन में अपनी सृजनात्मक भूमिका निभायी है। जिसमें 'एक औरत की कथा', 'हव्वा', 'सागर के तट पर' कहानियों का एक विशेष महत्व है।

सुधी पाठक जानते हैं कि राज कमल चौधरी के बोहेमियन चरित्र और महेन्द्र भल्ला के कथा-चरित्रों में ज्यादा अंतर नहीं है। महेन्द्र भल्ला की अन्यान्य कहानियों की तरह 'पुल की परछाई' की भी अधिकतर कहानियाँ एक मूल्य निरपेक्ष दुनिया की कहानियाँ हैं जिनमें परिवेशगत सामाजिक-राजनीतिक दबावों के लिए लगभग कोई गुँजाईश नहीं है। कुल मिलाकर ये गृहस्थी की ऊब और खातें-पीते खुशहाल परिवारों में वयःसंधि के यौनाकर्षणों की रहस्यमयी दुनिया की कहानियाँ ही अधिक हैं। 'फुंसियाँ', 'असली शुरूआत' और 'पुल की परछाई' आदि इसी प्रकार की कहानियाँ हैं। पढे जाने के दौरान ये थोड़ी देर को पकड़ती जरूर हैं, कभी-कभी ये खूब स्मार्ट भी लगती है, लेकिन किसी भी स्तर पर ये किसी गंभीर अन्वेषण का बोध जगा पाने में असफल रहती हैं। 'एक पति के नोट्स' के संदर्भ में देवीशंकर अवस्थी ने कभी महेन्द्र भल्ला को 'विकसित यथार्थ और बड़ी कलात्मक क्षमता' का कहानीकार कहकर प्रतिष्ठित किया था। महेन्द्र भल्ला के पात्र कहीं भी जीवन के व्यापक संदर्भो और मूल्य-दृष्टि से नहीं जुड़ते। सेक्स और उपभोक्ता संस्कृति के दबाव ही उनकी सबसे बडी चिन्ता है।

समकालीन कहानी के क्षेत्र में वामपंथी चेतना के सतीश जमाली, वेणु गोपाल ,(सहयात्री, अन्तयक्षरी) सृंजय (कामरेड का कोट) आदि अपना हस्तक्षेप रखते हैं तो जनवादी कहानी आन्दोलन में शिवमुर्ति, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा और नमिता सिंह की कहानियों का अपना विशिष्ट महत्व है।

'स्त्री-पुरूष सम्बन्ध : परिवर्तित समाज और विश्लेषण' नामक चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत संयुक्त परिवार बनाम एकल परिवार : शहरी और ग्रामीण जीवन को विश्लेषण सम्बन्धी आधार बनाया गया हैं। उषा प्रियंवदा की 'वापसी' कहानी संयुक्त परिवार की गाथा है तो मोहन राकेश की 'सुहागिने' कहानी पति-पत्नी सम्बन्धों में आयी रिक्तता और व्यर्थताबोध को दर्शाती हैं। कहना न होगा कि विवाहपूर्व और विवाहोत्तर सम्बन्धों के रेखांकन में राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, मोहन राकेश, से लेकर मैत्रेयी पुष्पा , नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग, ने कई अभिनव प्रसंग रचे हैं।

राजेन्द्र यादव की कहानियों में स्त्री-पुरूष सम्बन्धों वाली कहानियों की संख्या काफी बड़ी हैं। इनमें प्रेम की अशरीरी धारणा के तीखे प्रतिसाद से लेकर संबंधों के टूटने की पीड़ा तक की कहानियाँ शामिल हैं। तन और मन के दो अलग खानों में ,जैनेन्द्र की नायिकाओं की तरह बाँटकर स्त्री को देखने का 'नयी कहानी आन्दोलन' ने विरोध किया हैं। राजेन्द्र यादव भी इस छद्म को स्वीकार नहीं करते। 'मेरा तन तुम्हारा हैं', 'एक कमजोर लड़की की कहानी', की नायिकाओं के मुकाबले 'नीरंजना' की नीरंजना अपनी अर्जित आत्मसजगता के कारण ही अपने प्रेमी के प्रति अधिक ईमानदार हैं। 'पुराने नाले पर नया फ्लैट' में यह नाला दीरू के पति के पूर्व प्रेम का है और नया फ्लैट उनके दाम्पत्य सम्बन्धों को दर्शाता है जो कालोनी में नये मकान की तरह ही हवा के हर झोंके के साथ बदबू का भभका भी साथ लिये हैं। नारी जीवन की अस्मिता और स्वतंत्रता संदर्भ में मोहन राकेश की कुछ अन्य कहानियाँ 'आखिरी सामान', 'मिसपाल', 'भूखे' और 'सुहागिने' आदि स्त्री को पूरे सामाजिक संदर्भ में प्रस्तुत करती हैं। 'आखिरी सामान', की बेला भण्डारी मूल्यविहीन, भ्रष्ट सामाजिक व्यवस्था में उसके मुख प्रतिशोध का प्रतीक बन जाती है। मूल्यों के इस व्यापक ह्रास की सिथति में 'मिसपाल' की तिक्तता और हताशा उसके लिए अनिवार्य सामाजिक परिप्रेक्ष्य तैयार करती हैं। उसकी सबसी बड़ी आकांक्षा यही है कि दफ्तर के इस गलीज माहौल से निकल कर , किसी साफ सुथरे निर्जन स्थान पर बैठकर, अपने मन के दो चार चित्र बना सके । इस माहौल की सारी कटुता को पी और पचाकर भी उसकी आधारभूत सौंदर्य वृत्ति कुंठित होने से बची रह सकी हैं। इस तरह 'भूखे' में वास्तविक भूखे एवलीन और उसका बच्चा नहीं हैं। अपने भारतीय पती की असामयिक मृत्यु के बाद एवलीन अपनी और अपने बच्चे की जरूरते क्रमशः कम करती जाती हैं। कलाकार पती की तस्वीरे बिक जाने की आशा में वह स्वयं अपने को और बच्चे को बहलाती रहती हैं। इसके चारो ओर जो लोग हैं - सड़क पर, होटलों में और सब कही - वे ही दरअसल भूखे लोग हैं जो उसकी मजबूरी की बिना पर उसे ही अपनी खुराक बना लेना चाहते हैं, और वह भरसक गरिमामय ढंग से इस सबका प्रतिरोध करती हैं।

'अलगाव, तनाव और विडम्बना सम्बन्धी विमर्श' नामक पंचम अध्याय में समसामयिक जीवन की त्रासदी को रेखांकित किया गया हैं। निःसंदेह अज्ञेय की 'रोज' कहानी राजेन्द्र यादव 'जहाँ लक्ष्मी कैद है' और शिवमूर्ति की 'कसाईबाड़ा',सुधा अरोडा की 'महानगर की मैथिली', नासिरा शर्मा की 'संगसार' आदि कहानियाँ हमारे आसपास के अलगाव, तनाव और विडम्बना वाले संसार का ही प्रतिबिम्बित ताना-बाना हैं।

विसंगति बोध और नारी जीवन की त्रासदी स्थिति को जहाँ कमलेश्वर 'माँस का दरिया' और राजा निरबंसिया' में उकेरते हैं वही दीप्ति खण्डेलवाल 'हव्वा' कहानी में स्त्री-पुरूष के बीच आये रिक्तता बोध व्यावसायिक दृष्टिकोण तथा यौन मुक्ति को दर्शाती है। कहा जा सकता है कि

राज निरबंसिया का उल्लेख उसके प्रकाशन से लेकर आज तक उसके दोहरे कथा-शिल्प के कारण होता रहा हैं। लेकिन फिर भी कहानी में लोक-कथात्मक शैली का समानान्तार उपयोग दो भिन्न युगों की संवेदना को , उसमें घटित परिवर्तन को ,पर्याप्त सर्जनात्मक ढंग से उभारता हैं। बीमारी से उपजी जगपती की आर्थिक मजबूरियाँ उसे धीरे-धीरे उसकी पत्नी चंदा से दूर करती जाती है। वस्तुतः यह तथ्य ही कहानी में परिवर्तन संवेदना और मूल्य-बोध का वाहक बन जाता हैं। लेकिन आत्महत्या से पूर्व चंदा और कानून के नाम छोड़ा गया उसका संदेश अपनी रोमानी प्रकृति के कारण कहानि में निहित क्षीण से विचार को भी आहत करता हैं।

नई कहानी में आधुनिक नारी की उपस्थिति के संदर्भ में कमलेश्वर की टिप्पणी हैं -आधुनिक नारी अब अपनी पूरी गरिमा,देह-संपदा और वास्तविक सम्मान के साथ आई हैं (नई कहानी की भूमिका पृ.18) इसी संदर्भ में थोड़ा आगे चलकर लिखते है - औरते अब औरतें हैं ,वे झूठी सती या वेश्याएँ नहीं है, इसलिए नई कहानी खलनायिकाओं से शून्य है.....संशयग्रस्त सम्बन्धों के बिजबिजाते दलदल अब नहीं हैं। नारी की देह अब उसके अपने निर्णय की वस्तु हैं [6] कमलेश्वर द्वारा रचित कहानियाँ 'एक अश्लील कहानी', 'एक थी विमला', प्रेमिका, 'राते', 'माँस का दरिया' आदि कहानियों में स्त्री या तो सामाजिक विसंगतियों की शिकार है या फिर एक संत्रास भरा जीवन जीने को विवश है।

से.रा.यात्री की कहानी 'अंधेरे का सैलाब' दो परिवारों का समानान्तर चलने वाली काफी कुछ कृत्रिम और आरोपित स्थितियों की कहानी हैं। इस कहानी में 'मैं' के दूर के सम्बन्धी का इंजीनियर से ऐन दीवाली के दिन भेंट का संयोग जुटता गया हैं। जो 'मैं' के पूरे परिवार को अपने घर ले जाते हैं -जैसे दीवाली के मौके पर डॉली के तौर पर आई रिश्वत का प्रदर्शन जरूरी है। ईन चकाचौंध और भेटवाली दीवाली की तुलना में 'मै' के अपने घर की दीवाली अंधेरे का सैलाब बनकर रह जाती हैं। दीवारों और मुंडेरों पर दिये रखने के बाद ,रोशनी दिखाने के ख्याल से जब 'मैं' बच्चों को पुकारता है तो अंदर से कोई निकल कर नहीं आता.... 'अंदर जाकर देखा तो पापा के दोनों बच्चे फर्श पर टेढे-बेंगे होकर पड़े थे और पसीजी हुई मिठाई के टुकड़े उनकी मुट्ठियों में जकड़े हुए थे - नए कपडों में सजी उसी नन्ही सी मासूम बच्ची को गोद में उठाकर मैंने लाख जगाने की कोशिश की पर उसने आँखे एक क्षण के लिए मुलमुलाकर फिर बंद कर लीं और फुझड़ियों का बंडल उसकी पकड़ से छूटकर फर्श पर गिर गया [7]

'समकालीन कहानी का विकास : अद्यतन संदर्भ' नामक षष्ठ अध्याय के अंतर्गत परम्परा और आधुनिकता बोध की चर्चा की गयी हैं। जिसके परिप्रेक्ष्य में राजेन्द्र यादव की कहानी 'अभिमन्यु की हत्या', धर्मवीर भारती की 'गुलकी बन्नो' से लेकर मैत्रेयी पुष्पा की 'ललमनियाँ' भी शामिल हैं। स्त्री-पुरूष के बदलते आयाम में निर्मल वर्मा की 'परिन्दे', मोहन राकेश की 'सुहागिने', से लेकर निरूपमा सेवती की 'दहकन से परे' कहानी तक की

चर्चा अवश्यम्भावी हैं। हाल ही कमलकुमार और चित्रा मुदगल ने देह मुक्ति और नयी नैतिकता के संदर्भ में यौन विमुक्ति और भारतीय परिवेश एवं परम्परा पर आधारित विलक्षण कहानियाँ लिखी हैं।

समकालीन कहानी के प्रगतिशील परिदृश्य से लेकर जनवादी आन्दोलन विकास तक नारी जीवन में गुणात्मक परिवर्तन आया है। जिसकी गवाही मधुरेश भी देते है कि वर्तमान कहानी की मूल चिन्ता किसी न किसी स्तर पर मनुष्य की मुक्ति से जुडी है । इसमें एक ओर जहाँ भारतीय समाज में हाशिए पर जीवन जी रहे लोगों की अभावों और विविध रूपों में उत्पीडन से मुक्ति शामिल है वहीं पुरूष वर्चस्व वाले समाज में स्त्री की अपनी अस्मिता और मुक्ति का सवाल भी उतना ही महत्वपूर्ण है। मानवीय अस्मिता की इस लडाई में लेखक की भूमिका पर टिप्पणी करते हुए संजीव इसे 'ऋण मुक्ति की छटपटाहट' के रूप में व्यक्त करते हैं। (8) उनकी इस रचनात्मक छटपटाहट में ही कला की स्वायतता और उपभोक्ता अप-संस्कृति वाले समाज में कला की वास्तविक भूमिका तय होती है। अनेक स्तरों पर स्त्री के शोषण को संजीव पर्याप्त संजीदगी से देखते हैं। उनके यहाँ स्त्री खेत, फैक्ट्री में काम करती है। वह रखैल भी है और वेश्या भी। जसी बहू की बहू चुनौती की तरह चुभते व्यक्तित्व की युवती है जो गाँव के क्षितिज पर नई भोर की तरह उगती है। लेकिन उसके सारे संघर्ष के बावजूद न तो उसकी यातना का अंत है और न ही विडम्बना का। विगत अध्यायों में की गयी है पर भाषा शैली और रस शिल्प की चर्चा बगैर हमारा अध्ययन एकांगी कहा जा सकता हैं। अतः 'भाषा-शैली एवं शिल्प विधान' नामक सप्तम अध्याय में पचास वर्षो के विभिन्न कहानी आन्दोलनों और प्रवृत्तियों की विशिष्ट रचनाओं तथा रचनाकारों की शैली सम्बन्धी विशिष्टता पर भी सांकेतिक चित्रण रचा गया है। समकालीन कहानी में विशष वस्तु और संदर्भ के अनुरूप परंपरा और आधुनिकता बोध की टकराहट भी देखी जा सकती हैं। स्त्री-पुरूष सम्बन्धों के परिवर्तित आयामों में देह मुक्ति और नयी नैतिकता के हाशिए सक्रिय हुए हैं। शोध प्रबंध की अपनी सीमा हैं लेकिन विषय-वस्तु और रूप में अन्योन्याश्रीत सम्बन्धों की चर्चा भाषा-शैली ,बिम्ब और प्रतीक तथा शिल्प संबंधों के अभाव में पूर्ण नही मानी जाती हैं अतः उस दिशा में भी मूल्यांकन और विश्लेषण कार्य रचा गया हैं।

पूर्ववर्ती कहानियों की सांकेतिकता से नई कहानी की सांकेतिकता को अलग करते हुए मोहन राकेश लिखते है - 'बात वही होती है और जीवन के उसी कैनवास से उठाई जाती हैं। मगर उसके सम्बन्ध में लेखक के अनुभव की निजता, जीवन के यथार्थ की व्यापक पकड़ और भाषा तथा शिल्प के क्षेत्र में उसकी अपनी प्रयोगात्मकता उसकी रचना को भिन्नता और एक और ही सार्थकता प्रदान कर देती हैं।' इस सांकेतिकता के लिए मोहन राकेश ने ही नई कहानी से 'चिफ की दावत' और 'दोपहर का भोजन' का उल्लेख किया और टिप्पणी की है , 'चिफ की दावत' का संकेत माँ के चरित्र के माध्यम से उभरता है और 'दोपहर का भोजन' में अभावग्रस्त घर

की एक साधारण सी दोपहर के वर्णन मात्र से। कहना न होगा कि रचनाकार अपनी अभिव्यक्ति के लिए अपनी विशिष्ट शैली के साँचे निर्मित कर लेता हैं। जिससे रेणु की 'तीसरी कसम' रोमांटिक अवसाद का माध्यम बनती हैं और शिवमूर्ति की 'कसाईबाड़ा' कहानी हमारे चिंतन व मर्मव्यथा पर प्रश्न चिन्ह अंकित करती हैं।

धनंजय वर्मा ने भी हिन्दी कहानी के रचना शास्त्र संदर्भ में कहा है कि –'कहानी विधा के रूपात्मक साँचे निर्मित हुए और एक लम्बे अरसे तक कहानी की पहचान और परख इन्ही साँचो से होती रही। 'कहानी की आलोचना और मूल्यांकन में इन्हे एक रीति और कालान्तर में रूढ़ि का स्वरूप मिल गया । कथानक, चरित्र-चित्रण, देश-काल- वातावरण, शैली और उँश्य के पाँच तत्वों पर कहानियों की परख जारी रही। कथानक और चरित्र(पात्र) के अतिरिक्त संकलन त्रय (स्थान,कार्य और समय की एकता) की अवधारणाएँ भी नाट्य विवेचन से ज्यों-की-त्यों उठा ली गयी और संवाद को भी कहानी के तत्व के रूप में मान्यता मिली। इस सबका परिणाम यह हुआ कि कहानी की आलोचना और मूल्यांकन के अपने स्वतंत्र प्रतिमान विकसित नहीं हो पाए। (9)

राजेन्द्र यादव जहाँ मध्यवर्ग की भाषा शैली को बर्हिमुखी पात्रों के रूप में चित्रित करते हैं वहाँ मोहन राकेश मन के संवेदनशील पक्षों को निम्नमध्य वर्गीय पात्रों के परिवेश में। कमलेश्वर की बहुमुखी प्रतिभा कस्बे-ग्राम ,महानगर और आन्तरिक भावों के पात्रों को संपन्न करती हैं। सच है कि शहरी जीवन की अपेक्षा ग्रामीण अंचल और कसबाई जीवन शैली का चित्रण रचनाकार और पाठक् आलोचक के लिए एक चुनौती हैं। बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश ,राजस्थान, छत्तीसगढ, महाराष्ट्र और आन्ध्र में प्रचलित लोक शैलियों की छाप भी अनेकानेक रचनाओं में उपलब्ध हैं। जिसके लिए एक पृथक शोध प्रबंध की आवश्यकता होगी। प्रसंगवश कहना होगा कि फणीश्वनाथ रेणु के 'ठुमरी' कहानी संग्रह में संकलित अनेक कहानियों में कला और कलाकार की गिरावट के प्रति जो पीड़ा अभिव्यक्त हुई हैं। वह इस संकलन की एक कहानी 'भित्तिचित्र की मयूरी' में उभरती हुई दृष्टिगोचर होती हैं। इसी प्रकार 'आदिम रात्रि की महक' में संकलित अनेक कहानियों में सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन के अन्तर्वर्ती रसगंधो का जो मुग्ध चित्रण हुआ है तथा जिनमें लोक जीवन की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और लोक चेतना का फैलाव दृष्टिगोचर होता हैं।

शिवमूर्ति ,शैवाल और नमिता सिंह की कहानियों में अभिजात्य वर्ग की भाषा की जगह सहज बोल चाल की भाषा का निर्वाह पाया जाता है। हालाँकि नारी-उत्पीड़न ,पीढ़ियों का संघर्ष,छुआछूत व साम्प्रादायिक विद्वेष के प्रति आक्रोश तथा दृढता का व्यवहार, प्रेम-संबंधों के विभिन्न स्तरों का इनकी कहानियों में कहानीकार की सोच व संवेदना के अनुसार चित्रण हुआ है। स्त्री-पुरूष सम्बन्धों को अधिकांश रचनाकारों ने भावुकता के मकड़जाल से बचाकर उन्हें सहज भाव-भूमि पर प्रस्तुत किया है। यथार्थ के बहुआयामी

सन्दर्भ इन कहानीकारों ने प्रस्तुत किए हैं। यहाँ भयावह यथार्थ है तो सहज शिल्प से उद्‌भूत जादुई यथार्थ भी है। अधिकांस कथाकारों ने जनधर्मी भाषा को अपनाया है। (10)

प्रसंगवश नमिता सिंह की कहानियों में आत्मविश्लेषण और मनोविश्लेषणवादी पहलू भी दृष्टिगोचर होते हैं। नमिता सिंह की कहानी 'या देवी सर्वभूतेषु' की देवयानी अपने शरीर से अपने मन से तथा मस्तिष्क से अपने पति रोहन नामक रक्तबीज को अलग करना चाहती है। वह कहती है कि "रक्तबीजों को नष्ट करना ही होगा वरना आप स्वयं नष्ट हो जायेगी। (11) ममता कालिया की निर्मोही कहानी की नायिका भी स्त्री-अस्मिता की पक्षधर बनकर उभरती है वह अपनी दादी से भड़ककर निजी मूल्यों को रखती है "ये क्या दादी तुम्हारी कहानी में औरत हमेशा हारती है। ऐसी थोड़ी ही होती है कहानी। कहानी में नया भावबोध और आधुनिकता का वहन है। महानगरीय जीवन और पहाड़ी-परिवेश को चित्रित करती हुई निर्मल वर्मा की गद्य भाषा काव्याभिव्यक्ति के नये साँचे निर्मित करती हैं तो मैत्रेयी पुष्पा के पास बुन्देलखण्ड़ की भाषा शैली हैं। सारांशतः नयी कहानी के शिल्प सौंदर्य में उसके कथ्य के अनुरूप जैसे कहानी का सारा शिल्प ही उदार से उदारतम हो गया। उसका बँधा - बँधाया शास्त्रीय रूप अपने आप ही उदार और महिम हो गया। कथा, लोकतत्व, संस्मरण, यात्रा-वर्णन की शैली, डायरी की कला, ह्यलैशबैक पद्धति ये सबके सब तत्व मिल-जुलकर ऐक ही कहानी में उजागर महाज हो गया। यह सर्वथा एक नया शिल्प ही बन गया।

वर्तमान दौर तक जैसे भारत का समग्र जीवन ही कहानी शिल्प में कहानी की अन्तरात्मा में जैसे रूपायित हो गया हैं। शिल्प उसकी आत्मा में डुबकर एक हो गया और इस तरह कहानी कला बड़ी नाजूक और मर्मस्पर्शिनी बन गयी हैं। दूसरी ओर वह कहानी की ऊर्जा शक्ति का वाहन हो उठी हैं। इस सहज प्रक्रिया में शिल्प की अपनी बारीकी- कहानी के स्वभाव और शक्ति के साथ एकाकर होकर अपने सही रूप में संवेदित हो उठी। इसके लिए उसे भाग्यवश पाठकों का प्रबुद्ध वर्ग विरासत रूप में ही मिला जो कहानी की प्रकाशित संवेदना तथा बारीकियों की व्याख्या और सराहना कर सके। विवेच्य शोध प्रबंध अपनी सीमाओं के समकालीन कहानी के विभिन्न आन्दोलनों प्रवृत्तियों और विशिष्ठ मनोवृतियों की रचनाओं का विश्लेषण भर है। विषय की व्यापकता , गंभीरता और गहनता सुधी विद्वानों के सामने स्पष्ट हैं।

शोध प्रबंध में विवेचन की अपनी सीमा है और समकालीन कहानी के वर्तमान परिदृश्य में ग्राम जीवन, कस्बाई जीवन , विदेशी परिवेश तथा महानगरीय जीवन के जीवन के कई नये पुराने रचनाकार सक्रिय है। अतः गत्यात्मक दौर में कथ्य,विषय वस्तु, भाषा-शैली और शिल्प के नये क्षितिज और सिमान्त भी कालान्तर में मुखर हो सकते हैं।

पर कहा जा सकता है कि विगत पचास वर्षो में पुरूष-जीवन के बरक्स स्त्री-जीवन में अभूतपूर्व सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक बदलाव आये हैं। नारी अब न तो देवी है और न ही कर्तव्य परायण समर्पिता पात्र। वह महानगरों के जीवन में स्पर्धापूर्ण जीवन व्यतीत करती है तो कस्बों-गावों में अपने निजी विकास के लिए सन्नद्ध है। परम्परा की पगडण्डी से आगे चलकर अब वह विकास,अस्मिता और निजी मूल्यों की पक्षधरता के राजमार्ग पर आ गयी है।

उपसंहार परिशिष्ट : संदर्भ सूची

1. रोहिताश्व : समकालीनता और शाश्वतता पृ.177

2. धनंजय वर्मा : हिन्दी कहानी का रचनाशास्त्र पृ.85

3. कमलेश्वर : नई सदी सितंबर 1962

4. फणीश्वरनाथ रणु : धर्मयुग : कहानी विशेषांक पृ.49

5. मधुरेश : हिन्दी कहानी का विकास पृ.180

6. कमलेश्वर : नई कहानी की भूमिका पृ.19

7. से.रा. यात्री : सारिका अक्टूबर 1974 पृ.23

8. संजीव : हिन्दी कहानी का विकास 'उदघृत' पृ.182

9. धनंजय वर्मा : हिन्दी कहानी का रचनाशास्त्र पृ.198

10. अशोक भाटिया : समकालीन हिन्दी कहानी का विकास पृ.132

11. नमिता सिंह : 'या देवी सर्वभूतेषु' प्रतिनिधि कहानियाँ पृ.84